भाषा की उत्पत्ति

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

भाषा सामाजिक जीवन के लिए अत्यावश्यक तत्त्व है, क्योंकि यह पारस्परिक विचार-विनिमय की साधक है। किन्तु भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न ऐसा प्रश्न है, जिसका समाधान अद्यावधि नहीं हो सका है। भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न मानव की उत्पत्ति तथा उसके विचारों की अभिव्यक्ति के प्रश्न के साथ सम्बद्ध है। अतः भाषा की उत्पत्ति-विषयक प्रश्न का समाधान मानव-उत्पत्ति की समस्या के समाधान होने पर ही सम्भव है। वस्तुतः भाषा की उत्पत्ति का विषय अत्यन्त उलझा हुआ है। भाषा उत्पत्ति पर कुछ विचार पूर्णतया त्रुटिपूर्ण हैं और कुछ अंशतः। विद्वानों द्वारा प्रस्तावित मतों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है-

1. **दिव्योत्पत्ति सिद्धान्त-**

यह सबसे प्राचीन मत है। इस मत का कथन है कि जिस प्रकार परमात्मा ने मानव-सृष्टि की, उसी प्रकार मानव के लिए एक परिष्कृत भाषा भी दी। इस मत में प्रत्येक कार्य के मूल में दैवी शक्ति की सत्ता मानी जाती है। उस दैवी शक्ति ने ही सृष्टि के प्रारम्भ में ही वेदों का ज्ञान दिया, जिससे मानव अपना कार्य-कलाप चला सका। इस प्रकार वैदिक संस्कृत-भाषा मूल भाषा के रूप में प्राप्त हुई। वेद, उपनिषद्, दर्शन-ग्रन्थ और स्मृतियों में अनेक प्रमाण इस विषय के प्राप्त होते हैं कि ईश्वर से ही वेदों की उत्पत्ति हुई। वस्तुतः इस मत को मानने वालों का कथन है कि ईश्वर ने सृष्टि को जिस प्रकार से उत्पन्न किया है, उसी प्रकार उसने भाषा को भी उत्पन्न किया है। सृष्टि के साथ ही शब्दों और धातुओं के द्वारा मानव की भाषा का भी उदय हुआ है। सृष्टि का निर्माण करने वाला परमेश्वर है। मानव का निर्माण उसी ने किया है। मानव-मन में विचारों और भावों की सृष्टि भी उसी ने की और उन मानवीय विचारों और भावों की अभिव्यक्ति के माध्यम, अर्थात् भाषा का निर्माण भी उसी ने किया।

E-Learning material developed by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

ईश्वर पर आस्था रखने वाले सभी दैवी सिद्धान्त के समर्थक मूलतः इस सिद्धान्त के साथ अपना अभिमत व्यक्त करते हैं। किन्तु जिस प्रकार विभिन्न धर्मानुयायियों की ईश्वर विषयक मान्यता में भेद है, उसी प्रकार आदिभाषा के सम्बन्ध में भी मतभेद है।

इस मत के विरोधियों का अभिमत है कि यदि भाषा को ईश्वर ने उत्पन्न किया है तो भाषा को उसी रूप में शाश्वत रहना चाहिए, परन्तु विश्व की समस्त भाषाओं में परिवर्तन एवं परिवर्धन हो रहा है।

2. **सांकेतिक उत्पत्तिवाद या निर्णय सिद्धान्त-**

भाषा उत्पत्ति के सम्बन्ध में द्वितीय मत सांकेतिक उत्पत्तिवाद का है। इस मत के अनुसार यद्यपि भाषा की उत्पत्ति ईश्वर द्वारा नहीं हुई है, तथापि सृष्टि के आदि में मनुष्यों ने एकत्र होकर भाषा का निर्माण किया है। समाज और सामाजिक संस्थाओं का जिस प्रकार समझौते से निर्माण होता है, उसी प्रकार भाषा की उत्पत्ति मनुष्य ने की है। मनुष्य-समाज को समाज के सञ्चालन के लिए भाषा जैसे किसी साधन की आवश्यकता थी। मानव-समाज ने मिलकर इसकी रचना कर ली है। वस्तुओं को सांकेतिक नाम प्रदान किए गए हैं।

परीक्षण करने पर यह सिद्धान्त उचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि यदि मनुष्यों में कोई भाषा थी तो नवीन भाषा निर्माण की आवश्यकता ही क्या थी? पहले वाली भाषा का ही विकास किया जा सकता था। और, यदि कोई भाषा नहीं थी तो यह नाम निर्धारण किस प्रकार हुआ, एकत्र मनुष्यों ने वार्तालाप कैसे किया?

3. **धातु-सिद्धान्त-**

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक मैक्समूलर हैं। इस सिद्धान्त की उद्भावना प्रोफेसर हेस ने की थी। मैक्समूलर का कहना है कि सृष्टि के आदि में मानव में ऐसी स्वाभाविक विभाविका शक्ति थी, जो चार सौ या पाँच सौ धातुओं को जन्म देकर नष्ट हो गई है। इन्हीं धातुओं के आधार पर विश्व की भाषाओं का विकास हुआ है। यही कारण है कि विश्व की बहुत सी भाषाओं में साम्य देखने को मिलता है।

E-Learning material developed by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

यह सिद्धान्त भी भाषा की उत्पत्ति की समस्या का समाधान करने में असमर्थ है क्योंकि विश्व की समस्त भाषाएं धातुओं पर आधारित नहीं है।

4. **अनुकरणमूलकतावाद-**

इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह कल्पना की जाती है कि मनुष्य ने पशु-पक्षियों आदि के अनुकरण पर भाषा का निर्माण किया है। इस मत के उद्भावक हारडर हैं। ध्वनि अनुकरण या ध्वन्यात्मक शब्दों के इस सिद्धान्त का ह्विटनी, पाल तथा अन्य भाषाविज्ञानविदों ने समर्थन किया है। यद्यपि, भाषा की आज की अत्यन्त विकसित अवस्था में, उसके बहुत थोड़े, प्रायः नहीं के बराबर अवशेष रह गए हैं। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि आरम्भिक अवस्था में ये ध्वनि के अनुकरण पर आधारित ध्वन्यात्मक शब्द भाषा के महत्त्वपूर्ण अंग थे।

इस मत के आलोचकों का मत है कि इस प्रकार के अनुकरणात्मक शब्द किसी भाषा में सहस्त्रांश भी नहीं होते हैं। अतः इन्हीं शब्दों के आधार पर भाषा के निर्माण की कल्पना करना उचित नहीं है।

5. **मनोभावाभिव्यञ्जकतावाद-**

अनुकरणमूलकतावाद सिद्धान्त के आधार पर ही इस सिद्धान्त का विकास हुआ है। इस मत के अनुसार मनुष्य विभिन्न अवसरों पर अपने दुःख-सुख, घृणा-क्रोध आदि के भावों को व्यक्त करता है। उस समय हस्त-संकेतों और चेष्टाओं के स्थान पर मानव-मुख में कुछ ध्वनियों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार अचानक मानव-मुख से निःसृत मनोभावाभिव्यञ्जक शब्दों से ही भाषा की उत्पत्ति एवं विकास हुआ है।

इस मत के आलोचकों का मानना है कि विस्मयादिबोधक शब्द सामान्य भावों पर आश्रित होने पर भी विश्व कि विभिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न रूप में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त शब्दों की संख्या अत्यल्प है।

6. **श्रमपरिहरणमूलकतावाद-योहेहोवाद-**

श्रीनायर का कथन है कि मानव परिश्रम के बाद अपनी श्वास-प्रश्वास क्रिया के द्वारा अपने परिश्रम एवं थकान को शान्त करता है। उस श्वास-प्रश्वास के साथ वह कुछ ध्वनियों का उच्चारण करता है। सड़क पर कार्य करने वाले मजदूर, कपड़े धोने वाले धोबी, मल्लाह आदि हियो-हियो, हूँ, छी-छी आदि शब्द करते

E-Learning material developed by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

हैं। इसी सिद्धान्त के आधार पर यह निश्चित किया गया कि आदि मानव विभिन्न कार्यों को करते हुए कुछ इस प्रकार के उच्चारण करता था, उन्हीं से भाषा के कुछ शब्दों का निर्माण हुआ है।

इस मत के आलोचकों का कहना है कि विभिन्न भाषाओं में ये शब्द सामान्य रूप से प्राप्त नहीं होते हैं। भारतीय मजदूर कुछ दूसरे प्रकार की ध्वनि तथा अंग्रेज मजदूर दूसरे प्रकार की ध्वनि करते हैं। इसके अतिरिक्त ये शब्द सार्वदेशिक भाषाओं में अपना समान रूप से महत्त्व नहीं रखते हैं। किन्हीं–किन्हीं भाषाओं में इनकी सत्ता भी नहीं है।

7. **अनुरणनमूलकतावाद-**

इस मत के अनुसार निर्जीव पदार्थों के परस्पर संसर्ग या आघात से जो ध्वनि निकलती है, उसी के आधार पर बनाये गये शब्दों से भाषा का निर्माण किया गया है। इस सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि के प्रारम्भ में प्रत्येक वस्तु को देखकर मानव-मस्तिष्क में झंकार (रणन) हुई। उसी आधार पर प्रत्येक वस्तु का अलग-अलग नाम रखा गया। यह नामकरण प्रक्रिया रणनमूलक थी। नदी की कल-कल या नद-नद ध्वनि से प्रेरित होकर उसका नाम नदी रखा।

इस अनुकरणात्मक शब्दों से भी भाषा की उत्पत्ति की समस्या का समाधान सम्भव नहीं है, क्योंकि यद्यपि ये शब्द अवश्य अनुकरण के आधार पर बने हैं, किन्तु इनकी संख्या अत्यल्प है।

8. **इंगित सिद्धान्त-**

इस सिद्धान्त के प्रस्तावक डा० राये हैं। ये भाषा के विकास की चार सीढ़ियाँ मानते हैं-क) भावव्यञ्जक ध्वनियाँ- भय, हर्ष, आदि की अवस्था में ध्वनियों द्वारा अपने भावों को प्रकट करना, ख) अनुकरणात्मक शब्द- पशु, पक्षियों आदि की ध्वनियों के अनुकरण पर शब्द रचना, ग) भावसंकेत या इंगित-अंगों के संकेतों द्वारा भाव-प्रकाशन, घ) इसमें सूक्ष्म भावों के लिए शब्द बने।

इस मत के आलोचकों का अभिमत है कि इस प्रकार से बने शब्दों की संख्या बहुत कम है।

9. **समन्वय-सिद्धान्त-**

E-Learning material developed by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

इस सिद्धान्त के समर्थक और प्रवर्तक प्रसिद्ध भाषाशास्त्री हेनरी स्वीट हैं। उन्होंने कोई नया सिद्धान्त प्रस्तुत करने की अपेक्षा सर्वसिद्धान्तसंकलन को अधिक उपयुक्त समझा। उनका कथन है कि उपर्युक्त सिद्धान्तों में से आवश्यक सिद्धान्तों को एकत्र कर लिया जाए तो भाषा की उत्पत्ति की समस्या बहुत कुछ हल हो जाती है।

भाषा की उत्पत्ति समझने के लिए अन्य कोई एकमत शुद्ध न होने से सबका समन्वय उपयुक्त माना गया। यह सिद्धान्त सामान्यतया निर्विरोध रूप से स्वीकार किया जाता है।

10. **प्रतिभा-सिद्धान्त-**

प्रतिभा सिद्धान्त के संस्थापक आचार्य भर्तृहरि हैं। वाक्यपदीय में भर्तृहरि ने प्रतिभा को विश्व की आत्मा माना है और उसे सर्वशक्तिमान बताया है-

शब्देष्वेवाश्रिता शक्तिर्विश्वस्यास्य निबन्धिनी।

यन्नेत्रः प्रतिभात्मायं भेदरूपः प्रतीयते।।

अर्थात् शब्दों (भाषा) में ही विश्व को बाँधने की शक्ति है। शब्द (भाषा) नेत्र है और प्रतिभा आत्मा है। यही शब्द विभिन्न रूपों में प्रकट होता है।

भर्तृहरि का कथन है कि मनुष्य में प्रतिभा जन्मसिद्ध है। प्रत्येक प्राणी में प्रतिभा है। उसे जन्म से ही कुछ विशेषताएं उपलब्ध हैं। उसी प्रकार मनुष्य में कुछ विशेषताएं जन्म से होती हैं। मानव में प्रतिभा आत्मा के रूप में है। यह ईश्वरीय देन है। प्रतिभा के बिना मानव की सत्ता सम्भव नहीं। वस्तु क्या है, ध्वनि क्या है, किस वस्तु का क्या गुण है, किस ध्वनि का क्या प्रभाव पड़ता है, इसका निर्णय प्रतिभा के द्वारा होता है। विश्व का ऐसा कोई मानव नहीं है जो प्रतिभा की सत्ता को अस्वीकार करता हो या उसे प्रमाण के रूप में न मानता हो।

यह प्रतिभा प्रत्येक जीव में पृथक्-पृथक् रूप से रहती है और आवश्यकतानुसार विभिन्न स्थितियों में वह प्रस्फुटित होती है। यह प्रत्येक व्यक्ति में संस्कारजन्य होती है। यही मानवजीवन को संचालित करती है। प्रतिभा की उत्पत्ति शब्द से होती है। इसमें मानव के संस्कार आधार रूप में कर्य करते हैं। ये

E-Learning material developed by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

संस्कार इस जन्म के भी हो सकते हैं और पूर्वजन्म के भी हो सकते हैं। ये संस्कार प्रतिभा को उद्बुद्ध कर जीवन का संचालन करते हैं।

भर्तृहरि ने प्रतिभा के 6 भेद माने हैं- क) स्वाभाविक- जिस प्रकार बन्दर आदि में जन्मसिद्ध कूदने आदि की शक्ति, ख) चरणजन्य-चरण का अर्थ है सदाचार या तपःसाधना आदि, उससे जन्य, ग) अभ्यासजन्य- विशिष्ट विषय में निरन्तर अभ्यास से जन्य, घ) योगजन्य- यौगिक साधनाओं से ऋषि-मुनियों से प्राप्त, ङ) अदृष्टजन्य-पूर्व-संस्कारों से प्राप्त, च) विशिष्टोपहित-विशेष व्यक्तियों या परिस्थितियों द्वारा उद्बोधित।

वाक्यपदीय के टीकाकारों का कथन है कि प्रलयावस्था में सभी शब्दशक्ति के बीज निरुद्ध या अव्यक्त रूप को प्राप्त हो जाते हैं और नवीन सृष्टि के साथ वे अव्यक्त रूप में विद्यमान शब्दशक्ति के बीज पुनः अत्यन्त सूक्ष्म रूप में विकसित होते हैं और धीरे-धीरे पनपते हुए भाषा के रूप में प्रकट होते हैं।

अतएव भर्तृहरि ने समस्त लौकिक व्यवहार का आधार शब्द को बताते हुए पूर्वाहितसंस्कार अर्थात् पूर्वजन्म के संस्कारों को भाषा की उत्पत्ति का कारण माना है। ये संस्कार कभी नष्ट नहीं होते हैं, और ये ही बालक में शब्दभावना को उत्पन्न करते हैं।

E-Learning material developed by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi